TEACHERS THINK TOGETHER









टीचिंग काम और हमारे कुछ माँग व सपने

स्कूली शिक्षक: शिक्षित हो! संघर्ष करो! संगठित हो! हम माँ या महान नहीं, मेहनतकश हैं! गुरु या गृहणी नहीं, स्कूली शिक्षक हैं!

हम स्कूली शिक्षक हैं जो विश्वास करते हैं कि शिक्षा सामाजिक बदलाव का एक महत्वपूर्ण ज़िरया है - उसमें समाज में पिरवर्तन लाने की शिक्त है। हमारे स्कूली जीवन में हमने यह अनुभव किया है और आज भी ज़्यादातर स्कूलों में हम यह देखते हैं कि बच्चों को रटवाकर, डराकर और अक्सर मारकर भी पढ़ाया जाता है। हम नहीं चाहते कि हम अपने बच्चों को ऐसी शिक्षा दें। इसके विपरीत, हम सीखने का एक ऐसा माहौल बनाने की कोशिश करते हैं जहाँ हमारे बच्चे आज़ादी, प्यार और निडरता से दुनिया के बारे में सोचें, सीखें और सवाल करें। एक ऐसा माहौल जो उन्हें शोषण, उत्पीड़न और असमानता से मुक्त दुनिया बनाने और सामूहिक रूप से संघर्ष करने में सक्षम करने वाली शिक्षा दे। हम चाहते हैं कि हमारे बच्चे खुलकर अपनी बातों को रखें, दूसरों के अधिकारों के लिए लड़ें, गैर-बराबिरयाँ बनाए रखने वाली सामाजिक प्रक्रियाओं व रीति-रिवाज़ों पर सवाल खड़ा करें और हमेशा सपने देखने की हिम्मत ज़िन्दा रखें।

हम जब टीचर बने, तब हमने इन बड़े सपनों के साथ पढ़ाना शुरू नहीं किया था। धीरे-धीरे अपने काम और अपने जीवन-अनुभवों व सामाजिक प्रक्रियाओं पर जब हम मिलकर विचारने लगे, एक-दूसरे के साथ इन पर चर्चा करने लगे, तब हम सबको टीचिंग के काम व स्कूली शिक्षा पर एक सामूहिक समझ बनाने की ज़रूरत महसूस हुई जो हमारे टीचिंग के काम व रोज़मर्रा के जीवन-अनुभवों से जुड़ी हो। इसको आगे ले जाने के लिए हमको टीचरों की एक सामूहिक जगह व आवाज़ की ज़रूरत महसूस होती है।

टीचिंग का काम

ज़्यादातर स्कूलों में एक टीचर को 40 मिनट के पीरियड में एक विषय को एक निर्धारित पाठ्यक्रम के आधार पर पढ़ाना होता है जिसको तय करने में टीचर की कोई भूमिका नहीं होती। पाठ के अंत में दिए गए सवाल-जवाब को याद करवाना, साल में पूरे सिलेबस को 'कंप्लीट' करना और बच्चों को वही याद किए गए सवाल-जवाबों पर आधारित परीक्षा में अच्छे नम्बर से पास करवाने का दबाव टीचर पर हमेशा बना रहता है। इस दबाव से टीचर का काम उस 40 मिनट के टुकडों में सीमित हो जाता है - उतने ही समय में एक टीचर को पाठ पढ़ाना, पाठ समझाना, सवाल-जवाब लिखवाना व कॉपी चेक करना होता है तािक हर 2-3 दिन में एक पाठ कंप्लीट हो जाए। यह सोचने की बात है कि इस तरह के नियत काम में 35-40 बच्चों की एक क्लास को सँभालना, हरेक बच्चे को सीखने व समझने का मौका मिलना, अपने सवालों को पूछने की जगह मिलना और बातों को खुलकर अभिव्यक्त करने के मौके उपलब्ध कराना कैसे संभव हो सकता है?

इसके अलावा, एक टीचर को कई और नॉन-टीचिंग काम करने होते हैं, जैसे- रजिस्टर मेंटेन करना, क्लास की तैयारी करना, आकलन व कॉपी चेक करना, रिज़ल्ट बनाना, एडिमशन प्रचार करना, टीसी बनाना, पालकों से मिलना व बातचीत करना, स्कूल के कार्यक्रमों का आयोजन करना आदि। नॉन-टीचिंग काम की सूची ही अनंत है। सरकारी टीचरों को तो चुनाव व अन्य गैर-शैक्षणिक सरकारी कामों में भी भेजा जाता है! प्रशासनिक व अन्य काम के अलावा, बच्चों को भावनात्मक सपोर्ट देना भी एक टीचर के काम का बड़ा हिस्सा होता है। एक टीचर की दिनचर्या में अनिगत छोटी-बड़ी चीज़े होती हैं जो पूरी तरह से अनदेखी कर दी जाती हैं, जैसे- आए दिन बच्चों की खोई हुई पेन्सिलों या मिटनी को खोजने में आधा घंटा बिताना, अक्सर खाना ही नहीं खाना क्योंकि 20 मिनट के एक लंच ब्रेक में आधे से ज़्यादा समय बच्चों के टिफिन व बोतल को खोलने-बंद करने और उनको टॉयलेट ले जाने में बिताना पड़ता है। कई बार बच्चों के साथ व्यक्तिगत समय भी बिताना होता है - चाहे उनको किसी नए नशे या लत छुड़वाने के लिए हो या फिर उनके साथ किए गए यौन शोषण के ट्रॉमा से उभरने में मदद करने के लिए हो। जिन स्कूलों में क्वालिटी शिक्षा देना एक प्राथमिकता है - जैसे कि कई संगठन या एनजीओ द्वारा चलाए जाने वाले स्कूल जिन्होंने बेहतर व अर्थपूर्ण शिक्षा लाने के लिए ही स्कूल खोला हो - उनमें टीचरों को एक रूप से और भी ज़्यादा काम करना होता है। पाठ्यपुस्तक से आगे बढ़कर सिखाने के और भी स्रोत खोजना, बेहतर तैयारी करना, टीएलएम यानी सीखने-सिखाने की सामग्री बनाना, अक्सर बच्चों के घर जाना

और उनकी पारिवारिक स्थिति को बेहतर समझना, काफी सारा काम घर लेकर आना आदि - यह सब भी शामिल होता है। यह सब काम बच्चों को एक बेहतर शिक्षा देने के लिए महत्वपूर्ण ज़रूर है लेकिन दिक्कत यह है कि ऐसे स्कूलों में भी इन सबको वैतनिक काम में गिना नहीं जाता। दूसरी दिक्कत यह भी है कि संस्थाओं व संगठनों में भी अक्सर पदों में वही गैर-बराबरी दिखती है जो समाज में होती है। फंडर को रिपोर्ट लिखने वाला अँग्रेज़ी में सक्षम व्यक्ति को अक्सर ज़्यादा वेतन मिलेगा और टीचर जैसे कार्यकर्ता - जो अक्सर बहुजन समाज से आते हैं और इसीलिए बहुजन बच्चों को बेहतर समझकर बेहतर शिक्षा दे पातें हैं - उनको कम वेतन पर ही रखा जाता है। साथ में उनके काम के लिए जो सम्मान मिलता है वो भी कम ही रहता है।

एक टीचर के काम की कोई सीमा नहीं है...लेकिन इसके बावजूद हमको अक्सर सुनना पड़ता है कि एक टीचर तो ''पढ़ाएल बस जाथे'' यानी कि एक टीचर तो केवल पढ़ाने का काम करती है। यह बात ऐसे लहज़े में कही जाती है कि इस वाक्य का अनकहा हिस्सा यह है कि ''इसमें बड़ी बात क्या है?'' जैसे कि टीचिंग एक प्रॉपर नौकरी ही ना हो, उसको काम का दर्जा ही नहीं दिया जाए और ना ही एक टीचर को एक कामकाज़ी इन्सान माना जाए। जब हम इस वाक्य के पीछे छिपी विभिन्न धारणाओं को खोलना शुरु करते हैं तो हमारी पूरी सामाजिक संरचना भी खुलने लगती है।

समाज व कानून में एक टीचर की छवि

एक ओर यह माना जाता है कि महिलाएँ ही सबसे उचित टीचर होती हैं और टीचिंग महिलाओं का ही काम है क्योंकि बच्चों को सँभालना और उनको बड़ा करना महिला का ही काम माना जाता है। यह भी कहते हैं कि टीचर में मातृत्व की भावना ज़रूर होनी चाहिए। दूसरी ओर जब एक आदर्श शिक्षक की कल्पना की जाती है तो एक 'गुरु' की छिव के तौर पर एक ब्राहमण पुरुष की ही कल्पना की जाती है। (आज भी शिक्षक दिवस एक ब्राहमण पुरुष के नाम पर मनाया जाता है जबिक इस देश के बहुजन बच्चों को शिक्षा देने का पहला कदम सावित्रीबाई और ज्योतिबा फूले ने लिया और वो भी ब्राहमण पुरुषों के हमलों का सामना करते हुए। चूँकि हिन्दू धर्मग्रंथों में शिक्षा का एकाधिकार सिर्फ ब्राह्मण पुरुषों का था)। स्कूल के 'गुरुजी' से लेकर धर्मगुरुओं तक जिस तरह से समाज में गुरुओं को अंधिवश्वास के साथ पूजा जाता है - चाहे उन पर यौन शोषण के अनिगनत केस हों या फिर बच्चों को मारने व उनके साथ भेदभाव करने की आदत हो - वो काफी डरावना है। इस देश में अभी भी खेलों में उत्कृष्ट कोचों के लिए सर्वोच्च पुरस्कार एक ऐसे गुरु के नाम पर दिया जाता है जिन्होंने एक आदिवासी लड़के के अँगूठे को गुरुदक्षिणा के रूप में माँगा तािक वो कभी धनुर्विद्या के कौशल का इस्तेमाल न कर सके।

गुरु और माता की छवि बहुत ही अलग ज़रूर होगी लेकिन दोनों में साझी बात यह है कि टीचिंग के काम को एक व्यक्ति को समाज द्वारा दी गई या माने जाने वाली जगह और भूमिका के एक निहित कर्तव्य के रूप में देखा जा रहा है। उसमें ना ही एक सीखे जाने वाले ज्ञान और दक्षता की कल्पना शामिल है और न ही एक कामकाज़ी व्यक्ति के अधिकारों के बारे में सोचने के लिए जगह। लेकिन एक टीचर पैदा नहीं होता है - टीचर बनना पड़ता है। टीचर होने के नाते हम दावे से कह पाते हैं कि एक काबिल टीचर बनने में - जो दक्ष, ज्ञानी और अनुभवी हो, जो खुद के काम पर पुनर्विचार करने की क्षमता रखता हो - सालों लग जाते हैं और तरह-तरह के सपोर्ट की ज़रूरत होती है। एक रूप से ये जीवनभर की प्रक्रिया है जिसमें हम सब कार्यरत टीचर लगे हए हैं।

लेकिन टीचिंग को लेकर यह धारणाएँ हमारे समाज में इतनी बसी हुई हैं कि उनकी झलक कानूनी हस्तक्षेप में भी दिखती है: जब सार्वजनिक शिक्षा के नाम पर गाँव-गाँव में स्कूल खुलने लगे तो टीचरों की कमी के नाम पर सरकारी स्कूलों में 80 के दशक में पहली बार कॉन्ट्रेक्ट (ठेका) या पैरा-टीचर की नियुक्तियाँ होने लगीं। 'योगदान' नाम देकर तीन हज़ार से पाँच हज़ार के वेतन पर गाँव के ज़्यादातर बहुजन समाज के युवा-युवती को गाँव के बच्चों को पढ़ाने की ज़म्मेदारी - बिना किसी उचित प्रशिक्षण या सपोर्ट के - दे दी गई। यह माना गया कि समुदाय से होने के नाते वे अपने ही गाँव के बच्चों को पढ़ाने को उत्सुक रहेंगे और अपेक्षा यह थी कि उनमें 'सेवा भाव' हो। यह भी माना गया कि परमानेंट सरकारी टीचर की तरह ऐसे कॉन्ट्रेक्ट टीचर युनियन या संगठन

नहीं बनाएँगे और काम की परिस्थिति और वेतन को लेकर ज़्यादा हो-हल्ला नहीं करेंगे। लेकिन हकीकत कुछ और ही निकली और जैसा कि हम आज भी देखते हैं कॉन्ट्रेक्ट टीचर ही सबसे ज़्यादा अपने हकों के लिए आन्दोलन करते आए हैं - अपनी नौकरी व जान को भी खतरे में डालते हुए। हम उनके संघर्षों को सलाम करते हैं और उनसे प्रेरणा भी लेते हैं।

शुरु में जब ऐसे टीचरों ने अपने हकों को लेकर कानूनी लड़ाई छेड़ी तो 80 के दशक की शुरुआत में उनके पक्ष में कोर्ट ने कई अच्छे फैसले दिए - समविलियन के लिए, या निकाले जाने पर पुन: नियुक्त किए जाने के लिए। पर 1988 में जब गोवा की एक स्कूल टीचर ए. सुन्दरम्बल ने काम से निकाले जाने पर अपना केस कोर्ट में दर्ज़ किया तो मामला सुप्रीम कोर्ट तक पहुँचा। सुप्रीम कोर्ट ने भी उनके पक्ष में आदेश नहीं दिया - यह कहते हुए कि टीचिंग का काम ''न कुशल है और न ही अकुशल''। चूंकि टीचिंग एक 'नोबल' या 'महान' काम है, इसीलिए एक स्कूली टीचर को कानूनी परिभाषा में एक काम करने वाला व्यक्ति या 'वर्कमेन' नहीं माना जा सकता, तो उनको इंडस्ट्रीयल डिस्प्यूट्स एक्ट के तहत केस लड़ने का हक ही नहीं बनता! इस केस के बाद कॉन्ट्रेक्ट टीचर के आगे की सभी कानूनी लड़ाई में एक बड़ा मोड़ आया और लगातार टीचरों के अधिकारों के खिलाफ आदेश आने लगे। सरकारी स्कूलों में कॉन्ट्रेक्ट टीचर प्रणाली ज़हर की तरह फैली हुई है। ऑकड़े बताते हैं कि आज सरकारी स्कूलों में बहुत से राज्यों में कॉन्ट्रेक्ट टीचर (जैसे शिक्षाकर्मी आदि) परमानेंट टीचर से बहुत ज़्यादा संख्या में हैं और सबसे ज़्यादा टीचर बहुजन समाज (ओबीसी, एससी व एसटी) से हैं। ऑकड़े यह भी बताते हैं कि वर्तमान में कुल सरकारी टीचरों में महिला टीचर की संख्या पुरुषों से ज़्यादा है।

आज यह ठेका प्रथा पूरी शिक्षा व्यवस्था में फैल गई है - जब प्राइवेट स्कूल की संख्या बढ़ने लगी तो उनको भी एक आधार मिल गया टीचरों को बेहद कम वेतन पर और असुरक्षित काम की परिस्थितियों में रखने को। आज भी हमारे आसपास के सभी प्राइवेट स्कूलों में टीचरों को अकुशल मज़दूरों के न्यूनतम वेतन से कई गुणा कम वेतन दिया जा रहा है। महान कहलाकर, साड़ी पर ब्लेज़र पहनाकर और प्रोफेशनल बुलाकर हमारा ध्यान इस हकीकत से नहीं भटकाया जा सकता है कि ऐसे स्कूलों में टीचर का कितना शोषण किया जा रहा है। हम उचित मज़दूरी की माँग करेंगे और बेहतर काम की परिस्थिति के लिए लडेंगे! हम गुरु नहीं, गृहणी, बहु, बेटी, लाडली, माँ नहीं, सेवा भाव से भरे युवा नहीं, चुनाव ड्यूटी करने वाले व्यक्ति नहीं, हम महान नहीं मेहनतकश हैं, हम संघर्षशील हैं, दक्ष व बौद्धिक मज़दूर हैं...हम स्कूली शिक्षक हैं! हमें टीचर्स डे पर पुरस्कार नहीं, अपने अधिकार व काम का सम्मान चाहिए!

शिक्षा के अधिकार के लिए संघर्ष, अर्थपूर्ण व 'क्वालिटी' शिक्षा के लिए संघर्ष, टीचर के बेहतर काम के हालात के लिए संघर्ष और एक बेहतर व समतामूलक सामाज के लिए संघर्ष - सब गहरे रुप से जुड़े हैं।

एक ओर स्कूल के काम का आयोजन जिस तरह से परीक्षा, एक पूर्व-निर्धारित पाठ्यक्रम और 40 मिनट के टुकडों से तय होता है और साथ में अनदेखा किया गया नॉन-टीचिंग काम व भावनात्मक श्रम की निरन्तर माँगों से जहाँ टीचर को खाना खाने तक का समय नहीं मिल पाता है - ऐसे काम के महौल में अर्थपूर्ण व क्वालिटी शिक्षा दे पाना असल में नामुमिकन के बराबर है। हमने जब अपने काम पर मिलकर विचारना शुरू किया तो सबसे पहले सवालों में से एक सवाल यह था कि एक टीचर टिकता कैसे है? असल में हमने पाया कि हमारे आसपास के स्कूलों में - खासकर के कम-बजट के छोटे प्राइवेट स्कूलों में - टीचर बड़ी तादाद में बदले जाते हैं: एक ही अकादिमक साल के दौरान कई टीचर निकलते हैं और कई नए टीचर नियुक्त होते हैं। वेतन व काम की परिस्थिति भी ऐसी है कि ऐसा बदलाव होगा ही। पुरुष टीचरों पर बेहतर नौकरी व ज़्यादा वेतन खोजने का दबाव होता है और मिहला टीचर इसके साथ-साथ शादी, प्रेगनेंसी व घर में बढ़ते पुनरुत्पादन के काम के चलते छोड़ने पर मजबूर हो जाती हैं मसलन किसी के बीमार पड़ जाने के कारण या फिर बड़ी बहन की शादि होने पर।

हमने शुरु में यह भी सोचा कि इससे स्कूल मैनेजमेंट को भी परेशानी होती होगी लेकिन शोध करने पर समझ आया कि यह सच्चाई से बहुत दूर है। असल में ऐसे स्कूलों का चालन ही ऐसे बदलावों पर टिका है। एक ओर यह ज़रूरी है कि सब के सब टीचर निकले नहीं क्योंकि फिर तो ना ही कभी सिलेबस ठीक से कम्प्लीट होगा और न ही बच्चों के अच्छे नम्बर आएँगे। इससे स्कूल की प्रतिष्ठा गिरने लगेगी और एडमिशन कम होते जाएँगे जिसके चलते स्कुल को ही घाटा होगा। लेकिन दूसरी ओर यदि टीचरों को अच्छे से टिकाना है तो एक उचित मज़दूरी, बढ़ने के रास्ते आदि उपलब्ध कराने होंगे जिससे भी स्कूल के मुनाफे में घाटा होगा। आखिर में ये स्कूल टीचर के सस्ते श्रम पर ही तो टिके हैं। तो इस विरोधाभास को सुलझाने के लिए ऐसे स्कूलों में अक्सर आपको दो तरह के टीचर-मज़दूर दिखेंगे - एक छोटी संख्या में कुछ सीनियर टीचर जो 5-6 साल से ज़्यादा समय से हैं (जिनके या तो स्कूल मैनेजमेंट से जातिगत/पारिवारिक संबंध हों या फिर उनके लिए स्कूल की टाइमिंग ऐसी हो जिनके चलते वे अपनी पारिवारिक-सामाजिक भूमिकाओं व कर्तव्यों को - माँ, बहु, बीवी आदि होने की - निभा पा रही हों।) फिर अधिक संख्या में दूसरे प्रकार के मज़दूर हैं जो लगातर बदल रहे होते हैं। अक्सर सीनियर टीचर कहते हैं कि इन नए टीचरों को उन्हीं के बराबर या उनसे भी ज्यादा वेतन दिया जाता है। मैनेजमेंट तो जानता है कि ऐसे करने से भी बदलाव के चलते स्कूल पर आर्थिक भार नहीं होगा और साथ ही साथ ये एक तरीका बन जाता है सभी को एक बेहद कम वेतन की स्थिति में रखने का। जब स्कूल का चालन ही टीचर के काम की स्थिति को और बदतर करने पर टिका हो, हम क्वालिटी शिक्षा की बात ही कैसे कर सकते हैं? **टीचर** के काम की परिस्थिति बच्चों की स्कूली शिक्षा की परिस्थिति ही है क्योंकि स्कूल ही तो टीचरों का कार्यस्थल है। ऐसे ज़्यादातर स्कूलों में बहुजन समाज के ही टीचर व बच्चे होते हैं जिनकी काम व शिक्षा की परिस्थितियाँ ठीक नहीं हैं। हमारा मानना है कि प्राइवेट स्कूलों को और खासकर के ऐसे कम बजट प्राइवेट स्कुलों को बन्द ही किया जाना चाहिए।

समाज की तरह स्कूली शिक्षा व्यवस्था में तरह-तरह की गैर-बराबरियाँ होती हैं। सरकारी स्कूल, प्राइवेट स्कूल, सरकारी केन्द्रीय विद्यालय और नवोदय एक ओर और गाँव में एक एकल टीचर वाला छोटा-सा स्कूल दूसरी ओर। प्राइवेट में छोटे-छोटे शहरी बस्तियों में किराए के दो कमरों में चलने वाली प्राइवेट स्कूल एक ओर और किसी NGO या सीएसआर द्वारा चलाया जा रहा स्कूल या फिर एक तीन लाख सालाना फीस का इंटरनेशनल स्कूल दूसरी ओर। किसी भी प्रकार के स्कूलों में देखा जाए तो टीचरों के लिए एक ग्रोथ पाथ या आगे बढ़ने का रास्ता नज़र नहीं आता। प्राइवेट में निरन्तर बदलाव के चलते टीचरों को कभी अनुभव एकत्रित करने का मौका नहीं मिलता। और सरकारी स्कूलों में पदोन्नती की प्रणाली ऐसी है कि बार-बार अनुभव को नकारते हुए एक टीचर को एक विषेशज्ञ बनने का मौका ही संभव नहीं है: ढाँचागत रूप में ही प्रमोशन का जो सिस्टम है, उसमे प्राइमरी स्कूल टीचर को 'प्रमोट' करके मिडल में भेजा जाता है और मिडल से हाई। ऐसा 'प्रमोशन' बच्चों के लिए ठीक है लेकिन टीचर के लिए यह 'प्रमोशन' कैसे माना जा सकता है? असल में मिडल स्कूल में पढाना और प्राइमरी स्कूल में पढाना दो एकदम अलग क्षेत्र ही है जिनके लिए बिलकुल अलग दक्षताओं व ज्ञान की ज़रुरत होती है। सब्जेक्ट भी अलग होते हैं और बच्चों की उम्र और समझ व सीखने के तरीके व क्षमाताएँ भी अलग। हम यह बिलकुल नहीं मानते हैं कि प्राइमरी में कम मेहनत, ज्ञान या दक्षता की ज़रुरत है और मिडल में ज्यादा या हाई में और भी ज्यादा। अगर ऐसा होता तो एक यूनिवर्सिटी प्रोफेसर या एक रिसर्च गणितज्ञ को कहें कि वो पाँच साल के बच्चों को गणित सिखाए - वे एक हफ्ता तो क्या एक दिन भी नहीं टिक पाते। या तो वे रोते-रोते निकल जाते या बच्चों को रुला देते। 'प्रमोशन' तो ऐसे होने चाहिए जिससे आपको अपनी फील्ड में अपने क्षेत्र में विशेषज्ञ बनने का मौका मिले - जैसे डॉक्टर का देखें, तो वे अपनी एक चुनी गई स्पेशियलटी में ही इंटर्न से रेजिडेंट और रेजिडेंट से अटेंडिंग बनते हैं। दक्षता व अनुभव के साथ ज़िम्मेदारी भी बढ़ती है। और भी कई काम हो सकते हैं जिनसे तुलना की जा सकती है मगर हमको एक उदाहरण के रूप में डॉक्टरी से तुलना करना ठीक लगता है क्योंकि यह टीचिंग के काम के कई पहलुओं पर रोशनी डालने में मदद करती है जो आम तौर पर अनदेखे किए जाते हैं। हम यह बिलकुल नहीं मानते कि बच्चों में बीमारी है जिसको दूर करना टीचर का काम है। हम यह तुलना इसलिए कर रहे हैं क्योंकि टीचिंग भी डॉक्टरी की तरह एक साथ बौद्धिक और कुशल काम है। इसमें ज्ञान और दक्षता दोनों की आवश्यकता होती है और साथ ही एक रूप से बच्चों के भविष्य हमारे हाथ में होते हैं जो उनकी प्यारी जान की तरह हैं। हमको अपना काम उतनी ही जिम्मेदारी से करना होता है जैसे एक डॉक्टर को करना होता है जब हम उनको अपनी जान व स्वास्थ्य के साथ भरोसा करते हैं। और यह भी कि स्वास्थ की तरह शिक्षा भी हम सब का एक बुनियादी अधिकार है।

अगर देखा जाए तो एक मिडिल स्कूल सरकारी शिक्षक ने अपनी विषय-विशेष पढ़ाई सात साल तक की होती है - एक MD के ही बराबर। पर एक MD जिन्होंने सात साल पीडीएटिक सर्जरी (बाल चिकित्सा सर्जरी) की हो उनको अचानक से कार्डियोलॉजी (ह्रदयरोग) करने भेजा जाता है क्या? तो फिर एक टीचर से मिडल से हाई स्कल जाने की अपेक्षा क्यों की जाती है? एक टीचर को अपने ज्ञान व दक्षता को बढ़ाने के रास्ते क्यों नहीं है? उनके अनुभव की कोई जगह व वजुद क्यों नहीं है? एक टीचर को एक्स्पर्ट या विशेषज्ञ कब बोला जाएगा? पाठ्यक्रम से लेकर स्कूल के चालन में टीचर की कोई निर्णायक भूमिका ही नहीं होती है और टीचर के कामकाज़ी जीवन में उन्नती के रास्ते की कल्पना न होने के कारण न ही कभी होने की गुंजाइश। पाठ्यक्रम बनाता कोई और है और पढ़ाता कोई और। टीचर कोई है, टीचर ट्रेनर कोई और, और टीचर व शिक्षा पर रिसर्च करने वाला कोई और। अक्सर कौन इनमें से क्या बन रहा है हमारी पैदाइशी की सामाजिक-आर्थिक स्थिति पर ही निर्भर होता है। इस स्थिति को बनाए रखने में शिक्षा में काम करने वाले हर व्यक्ति का हाथ है और सबकी रोज़ी-रोटी और धन्धा भी इसी पर टिका है - टीचर ट्रेनिंग व स्कूल सपोर्ट देने वाले हर NGO व सीएसआर, धन्धा चलाने वाले व उनमें काम करने वाले व्यक्तियों से लेकर शिक्षा पर रिसर्च करने वाले हर प्रोफेसर तक। स्थिति को बदलने के लिए हम सब की जवाबदारी है। सबके लिए क्वालिटी व अर्थपर्ण शिक्षा के अधिकार का संघर्ष और टीचर के काम की बेहतर परिस्थिति का संघर्ष शिक्षा में इस स्तरीकरण को मिटाने से ही सफल हो सकता है जिसे समाज में पहले से मौजूद गैर-बराबरी पर खड़ा किया गया है और जो उसको बनाए रखने का काम करती है। इसीलिए शिक्षा व शिक्षकों का संघर्ष सामाजिक बदलाव व सामाजिक न्याय का संघर्ष है।

हमारे सामने चुनौतियाँ

अक्सर हमको भी अपने आप से यह सवाल पूछना पड़ता है कि जब हम - जो टीचर हैं और जो उसी पद्दित से पढ़कर निकले है, जहाँ हमने केवल रटकर परीक्षा पार करने के लिए (या शादी को टालने के लिए!) पढ़ाई की है और जब हम में से ज़्यादातर लोगों को स्कूल व समाज ने बार-बार यह एहसास दिलाया है कि हम उच्च शिक्षा प्राप्त करने लायक ही नहीं हैं, परिवर्तन लाने या नेतृत्व करने के लायक नहीं हैं, और हम में से कुछ ऐसे हैं जिनका इसके विपरीत हमेशा इन सब को करने का पैदाइशी हक माना गया है - हम सब मिलकर ऐसी शिक्षा कैसे दें जिसकी कल्पना हम करते हैं, जिसके ज़िरए हम समाज द्वारा बनाई गई मानसिक गुलामी से मुक्त बनें? हम भी तो इसी समाज का हिस्सा हैं जिसे टक्कर देकर बदलने की ज़रुरत है - फिर हम ऐसी शिक्षा देने के लिए अपने आप को कैसे तैयार करें? हमारे सामने कोइ सीधा स्पष्ट रास्ता या बने हुए नारे नहीं हैं। लेकिन एक नारा - सिद्धान्त - जिसको हमने बाबासाहेब डॉ बी आर अम्बेडकर से सीखा है, उसको हम अपने करीब रखकर चलते हैं:

शिक्षित हो! संघर्ष करो! संगठित हो!

हम उम्मीद करते हैं कि और भी शिक्षक हमारे साथ चलने को तैयार हैं - जो अपनी मज़दूरी व काम की परिस्थिति के लिए लड़ना चाहते हैं, जो खुद की व समाज में फैली हुई मानसिक गुलामी और गैर-बराबरी के खिलाफ लड़ना चाहते हैं, जो अपने बच्चों को - और खासकर उन बच्चों को जिनके परिवारों और पूर्वजों को शिक्षा से वंचित किया गया है - एक अर्थपूर्ण शिक्षा देने का प्रयास करें ताकि वे निडर होकर आज़ादी, प्यार और समानता के साथ सम्मान व गरिमा का जीवन जीएँ।

हमारी कुछ माँगें व सपने

- प्राइवेट स्कूलों का बंद होना: हमने जैसे शोध में पाया कि हमारे इलाके के छोटे प्राइवेट स्कूल न सिर्फ टीचर के सस्ते श्रम पर टिके हैं बल्कि मुनाफा कमाने के लिए टीचर के काम की परिस्थिति को और बदतर करने पर मजबूर हो जाते हैं। इसके चलते एक ही साल के दौरान कई टीचर बदलते हैं। जो टीचर कई साल तक टिके रहते हैं वो अक्सर इसीलिए टिके रहते हैं क्योंकि या तो स्कूल मैनेजमेंट से उनका जातिगत/पारिवारिक संबंध है या फिर उनके लिए स्कूल की टाइमिंग ऐसी है जिनके चलते वे अपनी पारिवारिक-सामाजिक भूमिकाओं व कर्तव्यों को माँ, बहु, बीवी आदि होने की निभा पाती हैं। ऐसे में वे टीचर होकर भी पहले गृहणी, बहु, बेटी के रूप में ही देखे जाते हैं, न कि कामकाज़ी महिलाओं की तरह। जब स्कूल का आधार ही जातिगत भूमिकाओं पर टिका है तब संवैधानिक मूल्यों के लिए ऐसे स्कूलों में जगह कैसे हो सकती है? इन स्कूलों को बंद करने की ज़रूरत इसी बात से आती है। दूसरा मुख्य कारण यह है कि जैसे हमने देखा, परीक्षा व पूर्वनिर्धारित पाठ्यक्रम को कंप्लीट करने के दबाव में जिस तरह से 40 मिनट के पीरियड में टीचर को पाठ पढ़वाना, समझाना, सवाल-जवाब लिखवाना और कॉपी चेक करना होता है उसमें क्वालिटी या अर्थपूर्ण शिक्षा की बात करना ही शायद संभव नहीं है। तीसरा, जब निशुल्क व अनिवार्य शिक्षा इस देश के हर बच्चे का एक मौलिक अधिकार है तब बच्चों को मुनाफा कमाने वाले किसी भी प्राइवेट स्कूल में पैसा देकर पढ़ने की ज़रूरत ही क्यों होनी चाहिए? हमारा मानना है कि हमको प्राइवेट स्कूल व स्कूली शिक्षा में किसी भी प्रकार के निजीकरण के खिलाफ अभियान चलाने की ज़रूरत है।
- सरकारी स्कूलों में ठेका प्रथा बंद करो: सभी तरह की कॉन्ट्रेक्ट टीचर पोस्ट को बंद करके सभी टीचर को परमानेंट सरकारी कर्मचारी बनाएँ। नियुक्तियाँ तुरंत बढ़ाई भी जाएँ। वेतन बढ़ने का आधार क्लास नहीं, केवल अनुभव हो। जब तक प्राइवेट स्कूल बंद न हो तब तक प्राइवेट स्कूलों में भी इसी वेतन स्तर पर टीचरों को रखने की ज़रूरत है।
- टीचर पैदा नहीं होते, टीचर बनना पड़ता है: एक सक्षम टीचर बनने में कई साल लग जाते हैं जिसमें पढ़ाई, प्रैक्टिस और तरह-तरह की सपोर्ट की ज़रूरत होती है। हमारा मानना है कि एक स्कूली शिक्षक बनने के लिए ग्रैजुएशन और फिर उसके बाद दो साल की विशेष शिक्षण शिक्षा के बाद टीचिंग प्रैक्टिस में भी एक नए टीचर को एक ही स्कूल में तीन साल तक एक (या हर साल एक अलग) सीनियर टीचर के अंडर काम करना चाहिए। एक-दो या छह महीनों का 'इंटर्निशप' करना या 'फील्ड' हिस्सा उसी दो साल के विशेष शिक्षण शिक्षा कोर्स के दौरान होना काफी नहीं होता है। तीन साल तक एक सीनियर टीचर के नेतृत्व में काम करने के बाद ही नए टीचरों को अपना क्लास दिया जाना चाहिए। यह भी ज़रूरी है कि इन तीन साल के दौरान नए टीचरों के लिए कई वर्कशाप हों, वे क्लास व बच्चों का अवलोकन करके अपने अवलोकन को लिखें, पुनर्विचार करना सीखें, बच्चों से रिश्ता बनाएँ आदि। ऐसी व्यवस्था के कई फायदे हैं एक ओर नए टीचर को टीचिंग का काम सीखने का मौका मिल रहा है, दूसरी ओर एक ही क्लास में दो टीचर रहने से टीचर आपस में चर्चा कर सकते हैं, मिलकर क्लास पर पुनर्विचार कर सकते हैं, बच्चों को मिलकर सपोर्ट कर सकते हैं, नॉन-टीचिंग काम को आपस में मैनेज कर सकते हैं आदि। एक और फायदा यह भी है कि जब बच्चों के सामने दो वयस्क चर्चा करते हैं और मिलकर काम करते हैं तो यह देखना कक्षा में एक सामूहिक व सहयोगात्मक संस्कृति लाने का एक मौका बनता है।
- स्कूल के काम के आयोजन में परिवर्तन: चालीस मिनट के पीरियड में लचीलेपन लाने की ज़रूरत के साथ-साथ यह ज़रूरी है कि टीचरों के लिए क्लास प्लानिंग व अन्य नॉन-टीचिंग काम के लिए टाइम-टेबल में ही कुछ निर्धारित समय हो। साथ में टीचर को आपस में चर्चा करने व बैठने का समय भी हो जहाँ वो मिलकर प्लानिंग कर सकें, पुनर्विचार कर सकें। हर टीचर के पास रोज़ क्लास के बाद निर्धारित समय हो जिसमें वो अगले दिन की प्लानिंग कर सके और आज की गई क्लासेस पर पुनर्विचार करके अपनी डायरी में लिखे। राज्य के आरटीई रूल्ज़ में टीचर के काम के दिन व घंटे पर काफी बारीकी में लिखा गया है। उन्हीं रूल्ज़ में टीचरों के

नॉन-टीचिंग काम के लिए - प्लानिंग से लेकर रेजिस्टर मेंटेन करने तक - निर्धारित समय होना चाहिए। वैसे ही पुनर्विचार और बाकी टीचरों के साथ वक्त बिताने के समय के लिए भी जगह दी जानी चाहिए। यह सब कार्य टीचिंग के काम के निहित व महत्वपूर्ण हिस्से हैं। इन्हें भी टीचर के वैतनिक काम के दायरे में रखकर आरटीई रूल्ज़ में महत्व दिया जाना चाहिए।

- टीचरों को गैर-शैक्षणिक कार्यों के लिए (जैसे चुनाव ड्यूटी आदि) भेजे जाने पर तुरंत रोक लगाई जाए।
- टीचरों के लिए एक अर्थपूर्ण 'ग्रोथ पाथ' या आगे बढ़ने व टीचिंग में विशेषज्ञ बनने के रास्ते होने की ज़रूरत: हमारा मानना है कि प्राइमेरी, मिडल व हाई स्कूल तीन अलग क्षेत्र हैं और हर एक क्षेत्र में एक टीचर को विशेषज्ञ बनने के रास्ते होने चाहिए। तीन साल सीनियर टीचर के अंडर काम करने के बाद 5-6 साल तक एक टीचर को अपनी क्लास को सँभालने का अनुभव तो मिलना चाहिए। साथ में इस दौरान नए टीचर भी अब उनकी गाइडेंस में काम करेंगे तो उनको एक टीचर को सपोर्ट करने का अनुभव भी सीखने को मिलेगा। लगातार अपनी टीचिंग लाइफ के दौरान टीचरों को वर्कशाप, छोटे विशेष कोर्स, अन्य टीचरों के साथ मुलाकात, व अन्य स्कूलों को विज़िट करने के मौके होने चाहिए। दस साल के बाद उनको टीचर ट्रेनिंग करवाने व पाठ्यक्रम निर्माण के भी विकल्प उपलब्ध होने चाहिए। अपने स्कूल के बाहर भी टीचरों को 'मेन्टोर' या सपोर्ट करने के तरीके भी हो सकते हैं। जैसे सरकारी स्कूली तंत्र में प्रशासनिक पदों का एक पदानुक्रम होता है (नोडल अधिकारी, बीईओ, सीईओ, डीईओ आदि), क्या हम अकादिमिक क्षेत्र में भी ऐसे नोडल सीनियर टीचर (प्राइमरी, मिडल, हाई के लिए अलग), ब्लॉक सीनियर टीचर आदि की कल्पना कर सकते हैं जहाँ टीचिंग प्रैक्टिस के लिए भी हर लेवल के विशेषज्ञ हों जो उस इलाके के स्कूलों के लिए अकादिमक गाइडेंस (मार्गदर्शन) व टीचर सपोर्ट दे सकें? टीचिंग के काम की निरन्तरता भी कभी-कभी बहुत कठिन होती है। एक निर्धारित समय के बाद हर टीचर को एक सबैटिकल या पेड लीव लेने के मौके भी होने चाहिए जिसमें उसे अपने टीचिंग अनुभव पर पुनर्विचार करके लिखने का काम करने का मौका मिले।
- शिक्षा नीति, पद्धत्ति व पाठ्यक्रम को विकसित करने में अनुभवी टीचरों की बड़ी भूमिका रहे: वर्तमान में शिक्षा नीति व पाठ्यक्रम को बनाने में अक्सर ऐसे लोग शामिल होते हैं जिन्होंने कभी स्कूल में बच्चों को पढ़ाया ही नहीं है। हमारा मानना है कि इन सबको विकसित करने में मुख्य भूमिका सीनियर टीचरों की होनी चाहिए जो 10 साल से ज़्यादा टीचिंग अनुभव रखते हो। यह भी उनके 'ग्रोथ पाथ' के विकल्पों में शामिल होना चाहिए।
- टीचर सामाजिक कार्यकर्ता भी हैं जो समाज में परिवर्तन लाने का काम भी कर रहे होते हैं: 'प्री-सर्विस' (टीचर बनने से पहले) व 'इन-सर्विस' (टीचिंग के दौरान) के शिक्षण में टीचरों को लगातार अपनी सामाजिक-राजनैतिक समझ बढ़ाने के मौके उपलब्ध होने चाहिए जिसमें ज़ोर संवैधानिक मूल्यों पर हो और जिसमें एक समतामूलक समाज लाने की कल्पना का आधार हो। टीचरों में सामूहिक व सहयोगात्मक तरीकों से मिलकर खुद के टीचिंग के काम पर व पूरे समाज पर मिलकर आलोचना करने व सवाल खड़ा करने की संस्कृति विकसित करनी होगी जो हम सबको मानसिक गुलामी से मुक्त होने के रास्ते पर चलने का मौका दे और एक समतामूलक सामाज के लिए संघर्ष करने की हिम्मत व रास्ता दे। इन रास्तों को कैसे बनाएँ व खोजें? यह ना तो स्पष्ट है और शायद ना ही आसान...लेकिन एक-दूसरे के सहयोग से हम सब मिलकर इन्हें बनाने की कोशिश कर सकते हैं...

यह ज़रूरी है कि इस देश में गुरुओं की विरासत को तोड़कर हम यह वादा लें कि हम कभी भी एक और द्रोणाचार्य को बनने नहीं देंगे जो अपने शिष्य का अँगूठा कटवाए और न ही किसी एकलव्य को जो अपना अँगूठा देने को तैयार रहे! आइए मिलकर हम स्कूली शिक्षक खुद को शिक्षित करें, संगठित बनें और अपनी माँग व सपनों को पूरा करने के लिए मिलकर संघर्ष करें!

#TeachersThinkTogether



